कैसे रुके मुसलमानों का अलगाव? : जस्टिस सच्चर का रास्ता

प्रेम सिंह

(*यह श्रद्धांजलि जस्टिस राजेन्द्र सच्चर की दूसरी पुण्यतिथि 20 अप्रैल 2020 पर लिखी गई थी, और कई पत्रिकाओं/पोर्टल्स में प्रकाशित हुई थी. सच्चर साहब की चौथी पुण्यतिथि, 20 अप्रैल 2022, के अवसर पर उन्हें याद करते हुए यह श्रद्धांजलि फिर से जारी की गई है.*)

जस्टिस सच्चर की दूसरी पुण्यतिथि 20 अप्रैल 2020 को पड़ती है. इस अवसर पर उन्हें याद करते हुए यह समझने की जरूरत है कि भारतीय समाज में मुसलामानों के उत्तरोत्तर बढ़ते अलगाव को लेकर उनकी चिंताएं बहुत गहरी थीं. चिंता के साथ उन्हें इस जटिल समस्या की गहरी पकड़ भी थी. वे हमेशा एक आधुनिक भारतीय नागरिक की तरह इस समस्या पर विचार करते थे. समस्या को लेकर प्रचलित भावनात्मक व्यवहारों को नाकाफी मानते हुए, वे ठोस समाधानों पर अमल करने के हिमायती थे.

मुझे नहीं पता प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने देश के सबसे बड़े अल्पसंख्यक समुदाय की सामाजिक-आर्थिक-शैक्षिक स्थिति पर विस्तृत रपट तैयार करने के लिए जस्टिस सच्चर को ही क्यों चुना? एक प्रतिबद्ध लोहियावादी-समाजवादी जस्टिस सच्चर डॉ. मनमोहन सिंह की आर्थिक नीतियों के कट्टर विरोधी थे. जस्टिस सच्चर दिल्ली उच्च न्यायलय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश थे. लेकिन प्रधानमंत्री के सामने इस काम के लिए सर्वोच्च न्यायलय और उच्च न्यायालयों के बहुत से पदासीन और अवकाश प्राप्त न्यायधीश उपलब्ध थे. शायद प्रधानमंत्री का यह इरादा बन गया था कि मुसलमानों की सामाजिक-आर्थिक-शैक्षिक स्थिति की वास्तविकता देश के सामने आ जानी चाहिए. उन्हें लगा होगा की तभी मुसलमानों को नई आर्थिक नीतियों के तहत आगे के विकास में शामिल किया जा सकेगा! लेकिन सच्चर समिति की रपट की मार्फ़त मुसलमानों के सामाजिक-आर्थिक-शैक्षिक जीवन की वास्तविकता सामने आ जाने के बावजूद कांग्रेस ने रपट की सिफारिशों को समुचित तरीके से लागू करने की जरूरी तत्परता नहीं दिखाई. (प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने 'देश के संसाधनों पर पहला हक़ अल्पसंख्यकों का है' जैसा विरोधाभासपूर्ण वक्तव्य देकर भारतीय जनता पार्टी (भाजपा), जो पहले से रपट का तीखा विरोध कर रही थी, को अनावश्यक रूप से विवाद पैदा करने का मौका दे दिया. प्रधानमंत्री का बयान विरोधाभासपूर्ण इसलिए था कि नई आर्थिक नीतियों का जनक होने के नाते वे देश के संसाधनों पर पहला हक़ कारपोरेट घरानों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों का सुनिश्चित कर चुके थे.) धर्मनिरपेक्ष कही जाने वाली पार्टियों, जिन्होंने कांग्रेस से 'मुस्लिम वोट बैंक' छीन लिया था, ने भी अपनी सरकारों के

स्तर पर रपट की सिफारिशों को गंभीरता से लागू नहीं किया. अगर यह होता तो शायद मुस्लिम समाज की अलगाव-ग्रस्तता का मौजूदा भयावह रूप सामने नहीं आया होता.

प्रधानमंत्री की 7 सदस्यीय उच्च स्तरीय समिति का गठन जस्टिस सच्चर की अध्यक्षता में 5 मार्च 2005 को किया गया. समिति ने निर्धारित समय में काम पूरा करके 403 पृष्ठों की रपट सरकार को सौंप दी, जिसे सरकार ने 30 दिसंबर 2006 को संसद में जारी कर दिया. पूरी रपट केंद्र और राज्य सरकारों के विविध स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर तैयार की गई थी. लेकिन यह रपट केवल आंकड़े नहीं देती, बल्कि यह निर्देश भी देती है कि आधुनिक विश्व में एक नागरिक समाज का निर्माण कैसे होना चाहिए. रपट में दिए गए तथ्यों, निष्कर्षों व सिफारिशों के सामने आते ही जस्टिस सच्चर का नाम पूरे देश में चर्चित हो गया. हालांकि उन्होंने हमेशा रपट का श्रेय पूरी समिति को दिया और रपट पर आयोजित गोष्ठियों और चर्चाओं से अपने को हमेशा दूर रखा. यह स्वाभाविक ही था कि जस्टिस सच्चर का नाम मुसलमानों के घर-घर में आदर और अहसान की भावना के साथ लिया जाने लगा. बड़े-छोटे मुस्लिम संगठन और व्यक्ति अपने 'मसीहा' को कार्यक्रमों में निमंत्रित करने, उनकी बात सुनने, उनके साथ तस्वीर खिंचवाने के लिए लालायित रहने लगे.

यह सर्वविदित है कि जस्टिस सच्चर नागरिक अधिकारों के पक्ष में सतत सक्रिय भूमिका निभाते थे. जयप्रकाश नारायण (जेपी) द्वारा स्थापित पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज (पीयूसीएल) के संचालन में उनकी केंद्रीय भूमिका रहती थी. शोषित-दमित समूहों को न्याय दिलाने के लिए देश भर में चलने वाले विविध संघर्षों में उनकी सक्रिय हिस्सेदारी होती थी. समाजवादी आंदोलन से जुड़े कार्यक्रमों में तो वे एक अनिवार्य उपस्थति होते ही थे. भारत में जज होने का एक आतंक होता है. जस्टिस सच्चर ऐसे जज थे जिनके पिता कांग्रेस के बड़े नेता और पंजाब के पहले मुख्यमंत्री रह चुके थे. लेकिन सरल शख्सियत के स्वामी जस्टिस सच्चर सभी के लिए सहज उपलब्ध माने जाते थे. ओहदे और आर्थिक हैसियत के आधार पर छोटे-बड़े का भेद करना उन्होंने नहीं जाना था. इस मामले में वे सच्चे समाजवादी थे. सच्चर समिति की रपट आ जाने के बाद उनके व्यस्त रूटीन में मुस्लिम समुदाय से जुड़े संगठनों और लोगों से मिलने का सिलसिला भी जुड़ गया जो उनकी मृत्युपर्यन्त चलता रहा. ऐसे काफी अवसरों पर मैं उनके साथ रहा हूं.

खास तौर पर मुस्लिम नौजवानों से उनका कहना होता था कि समिति का काम रपट प्रस्तुत करना था. रपट में की गईं सिफारिशों को लागू कराना अब उनका काम है. बेहतर होगा वे रपट पर सभा-सेमीनार में उन्हें बुलाने के बजाय रपट की सिफरिशों को लागू कराने के लिए केंद्र व

राज्य सरकारों के साथ संपर्क बना कर योजनाबद्ध रूप में काम करें. साथ ही सिफारिशों से लाभान्वित होने वाले लड़के-लड़कियों एवं स्त्री-पुरुषों को जागरूक बनाने का काम करें. जस्टिस सच्चर का मानना था कि मुस्लिम समाज के अलगाव को कम करने का सर्वाधिक कारगर उपाय है कि शिक्षा, प्रशासन, व्यापार और राजनीति में उनका समुचित प्रतिनिधित्व हो. लेकिन उनकी बार-बार की सलाह के बावजूद देश में एक भी ऐसा मुस्लिम संगठन नहीं बना जो सच्चर समिति की रपट की सिफारिशों को लागू कराने के मकसद से काम करता हो. जिस तरह से राजनीतिक नेताओं और पार्टियों ने रपट का हल्ला खूब मचाया, लेकिन उसकी सिफारिशों को लागू करने के लिए ठोस काम नहीं किया, उसी तरह मुस्लिम संगठनों/व्यक्तियों ने उस दिशा में कोई ठोस भूमिका नहीं निभाई.

सच्चर समिति की रपट के दस साल होने पर 22 दिसंबर (जो जस्टिस सच्चर का जन्मदिन भी होता है) 2016 को पीयूसीएल, सोशलिस्ट युवजन सभा (एसवाईएस) और खुदाई खिदमतगार ने दिल्ली में एक दिवसीय परिचर्चा का आयोजन किया था. जस्टिस सच्चर खुद उस कार्यक्रम में श्रोता की हैसियत से मौजूद रहे. परिचर्चा में कई विद्वानों और समिति के सदस्यों के अलावा ज़मीयत उलमा हिंद के महासचिव मौलाना महमूद मदनी और ज़माते इस्लामी हिंद के महासचिव डॉ. मोहम्मद सलीम इंजीनियर ने हिस्सा लिया था. समिति में सरकार की तरफ से ओएसडी रहे सईद महमूद ज़फर ने विस्तार से बताया कि 10 साल बीतने पर भी रपट की सिफारिशों पर नगण्य अमल हुआ है. परिचर्चा के अंत में पारित किये जाने वाले प्रस्ताव के बारे में मैंने जस्टिस सच्चर से सुझाव मांगा कि वे रपट की कौन-सी दो सिफारिशों को जरूर लागू करने पर जोर देना चाहेंगे? उन्होंने कहा पहली, समान अवसर आयोग (इक्वल अपॉर्चुनिटी कमीशन) का गठन हो, ताकि निजी क्षेत्र में आवेदन करने वाले अल्पसंख्यक अभ्यर्थियों के साथ भेदभाव रोका जा सके. राज्य सरकारें बिना केंद्र की अनुमति के यह आयोग गठित कर सकती हैं. दूसरी, विधानसभाओं और लोकसभा के लिए ऐसी आरक्षित सीटों को अनारक्षित किया जाए जो मुस्लिम-बहुल हैं. उनके बदले में उन सीटों को आरक्षित किया जाए जो दलित-बहुल हैं. प्रस्ताव पब्लिक डोमेन में तो जारी किया ही गया, गैर-भाजपा दलों द्वारा शासित राज्यों की सरकारों को सीधे भेजा गया. लेकिन किसी भी राज्य सरकार ने समिति की समान अवसर आयोग गठित करने की सिफारिश पर 10 साल बाद भी अमल की पहल नहीं की.

देश के राजनीतिक एवं बौद्धिक विमर्श से सच्चर समिति की रपट की चर्चा पूरी तरह गायब हो चुकी है. पिछले लोकसभा चुनाव में मुख्यधारा राजनीति की एक भी पार्टी ने अपने घोषणापत्र में सच्चर समिति की सिफारिशों का जिक्र नहीं किया. मोदी-शाह के सांप्रदायिक फासीवादी हथकंडों के सामने ज्यादातर नेताओं और पार्टियों ने हथियार डाल दिए हैं. मुस्लिम नेतृत्व की भी सच्चर

समिति की सिफारिशों के बारे में कोई चिंता देखने को नहीं मिलती. कार्पोरेट-सांप्रदायिक गठजोड़ की विध्वंसक राजनीति, नागरिकता संशोधन कानून, (सीएए) राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर (एनआरसी), राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (एनपीआर) और अब तबलीगी ज़मात प्रकरण जैसे कारकों ने मुस्लिम समाज को बुरी तरह अलगाव की स्थिति में डाल दिया है. जैसा कि ऊपर कहा गया है, सच्चर समिति की सिफारिशों के आधार पर अगर सामाजिक-आर्थिक-शैक्षिक अलगाव कुछ हद तक पाट दिया जाता तो शायद मुस्लिम समाज इस कदर धार्मिक अलगाव का शिकार नहीं हुआ होता. इसके लिए केवल अल्पसंख्यक हित का पाखंड करने वाले नेता और सरकारें ही जिम्मेदार नहीं हैं, मुसलमानों का राजनीतिक-धार्मिक और बौद्धिक नेतृत्व भी उतना ही जिम्मेदार है.

जस्टिस सच्चर को दूसरी पुण्यतिथि पर याद करने का यह कर्तव्य बनता है कि मुस्लिम सहित देश के सभी नागरिक, खासकर युवा, जाति और धर्म की गोलबंदियों से अलग हट कर सचमुच संविधान-सम्मत 'समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष एवं लोकतांत्रिक' भारतीय राष्ट्र बनाने का संकल्प करें; उसी क्रम में सच्चर समिति के निष्कर्षों और सिफारिशों पर एक बार फिर गंभीरतापूर्वक चर्चा शुरू हो; ताकि मुस्लिम सहित अन्य अल्पसंख्यक समुदाय अलगाव की पीड़ा से बाहर आएं.

(समाजवादी आंदोलन से जुड़े *लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व शिक्षक हैं*)